भारतीय कला के तारतम्य में बौद्ध कला

विजय सिंह
शोध छात्र, नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

भारतीय कला में बौद्ध कला का विशिष्ट योगदान रहा है। यद्यपि कि बौद्ध धर्म का जन्म भारत में हुआ। तथापि इसका प्रचार–प्रसार भारत के बाहर अधिकाधिक रूप में प्राप्त होता है। हालाकि बौद्ध कला के विभिन्न जीवन्त उदाहरण और उनके अवशेष भारत के अनेकानेक भू–भागों (मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, बिहार आदि स्थानों) में विस्तृत रूप में विद्यमान है।

कला और धर्म का सम्बन्ध प्रत्येक युग में दृष्टिगत होता है। देवताओं के प्रति सर्मपण का भाव इसमें प्रदर्शित होता है। देवताओं का निवास देवगृह या प्रसाद अथवा स्तूप सर्वत्र है। इसके अर्थ एक ही है। यद्यपि रूप भिन्नता अवश्य दृष्टिगत होती है। मन्दिर का गर्भगृह, स्तूप की हार्मिका दोनों ही देव स्थान के रूप में स्वीकारे जाते है। अनेकानेक रूप विभिन्न देवताओं के प्राप्त होते है। जिनमें विद्याधर, नदी, अप्सरा, नाग, यक्ष, गन्धर्व[1], आदि प्रमुख है। इनके अतिरिक्त विष्णु, परशुराम, राम, कृष्ण एवं बुद्ध भिन्न–2 नाम के एक ही देवत्व स्वरूप है। यह देव सर्वव्यापी एवं सर्वप्रचलित है।[2]

भारतीय कला की आत्मा को जानने के लिए प्रतीकों को कला के सन्दर्भ में जानना आवश्यक है। जिसके अर्न्तगत बौद्ध कला का तारतम्य भारतीय कला में स्पष्टतः परिलक्षित होता है। बौद्ध धर्म के हीनयान सम्प्रदाय में प्रतीकों को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। भारतीय कला में प्रतीकात्मक कला के अर्न्तगत पद्म, स्वास्तिक, (चित्र सं. 1) पूर्णघट, श्रीलक्ष्मी, यक्ष, नाग, गरूड़, चक्र, आदि उल्लेखनीय स्थान रखते है। इन प्रतीकों का समावेश हम बौद्ध कला में भी देखते हे।[3]

भारतीय इतिहास में सैन्धव सभ्यता का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस सभ्यता को हड़प्पा सभ्यता के नाम से भी जाना जाता है।[4] हड़प्पा की मूहरों पर स्वास्तिक के प्राचीनतम् एवं विविध रूप अंकित है।[5] प्रतीक–रूप में कुछ सोने के अभूषण बुद्ध के अस्थिकलश के साथ पिपरहवा से प्राप्त होते है। जिसमें स्वास्तिक का चिन्ह (एक आभूषण पर) प्राप्त होता है। इनके साथ ही स्वास्तिक का प्रयोग शिल्पकला के माध्यम से शिलालेखों तथा कौशाम्बी एवं

अमरावती के शिल्पों में भी दृष्टिगत होता है। मौर्य सम्राट अशोक के जौगड़–शिलालेख में स्वास्तिक का प्रकटीकरण हुआ है। बौद्ध कला के सन्दर्भ में कौशाम्बी से प्राप्त आयागपट्ट पर भी स्वास्तिक दृष्टव्य है।[6] स्वास्तिक का उत्कीर्णन कुषाणकाल में भी हुआ। इनके अतिरिक्त नागार्जुनकोण्ड स्तूप के शिल्पों में भी स्वास्तिक का प्रकटीकरण किया गया है।[7]

हीनयान बौद्ध सम्प्रदाय में बुद्ध के जीवन को प्रतीकों के माध्यम से दर्शाया गया है। यहॉ बुद्ध के मूर्त रूप को नही प्रदर्शित किया गया है। परन्तु भक्ति आन्दोलन की धारा से आगामी काल में बौद्ध अनुयायी भी प्रभावित हुए। इसी कारण शनैः शनैः इनके हृदय में ब्रहाम्ण धर्म में व्याप्त पूजा–अर्चना परम्परा को देख कर परिर्वतन की इच्छा जागृत हुई। अतः वह इस सन्दर्भ में सोचने को वह बाध्य हो गये। जिसका परिणाम बौद्ध धर्म में प्रतीकों के रूप में सामने आया। त्रिरत्न, बुद्ध धर्म तथा संघ का, स्तूप बुद्ध के महापरिनिर्वाण का, धर्मचक्र उनके प्रथम प्रवचन का, तथा बोधिवृक्ष उनके सम्बोधि अथवा ज्ञान प्राप्ति का प्रतीक स्वीकारा गया। जिसका अंकन हम बौद्ध कला के विभिन्न केन्द्रों भरहुत, सॉची, अंजता आदि के शिल्पांकन एवं दृश्यांकन में प्राप्त करते है।[8]

प्रतीकों का महत्व बौद्ध धर्म में सर्वप्रचलित हैं। इन प्रतीकों को कला के माध्यम से प्रदर्शित कर बौद्ध मतानुयायियों ने अपने कलात्मक विचारधारा को भी प्रदर्शित किया। परन्तु आगे चलकर जब कुषाण काल में चर्तुथ बौद्ध संगति हुई। और बौद्ध धर्म हीनयान एवं महायान शाखा में विभक्त हुआ। तब इस धर्म के महायान शाखा में बुद्ध को बोधिसत्व अथवा आदिबुद्ध के रूप में स्वीकारा गया। अब बुद्ध को लोकोत्तर रूप में स्वीकार कर उनकी प्रतिमा निर्मित की जाने लगी। और उनकी पूजा–अर्चना मूर्त रूप में होने लगी। बुद्ध मूर्ति को हम मथुरा एवं गंधार शैलियों में देखते है। इस प्रकार मूर्ति निर्माण परम्परा में भारतीय कला का प्रभाव दृष्टिगत होता है।[9]

बौद्ध प्रतीकों के रूप में ही कतिपय स्तूप, धर्मचक्र, एवं बोधिवृक्ष को समान्यतः स्वीकारा जाता है। परन्तु इन प्रतीकों एवं कुछ अन्य प्रतीकों को जो बुद्ध के जीवन से सम्बन्धित है। यद्यपि उन्हें बौद्ध प्रतीक कह दिया गया। लेकिन यह पूर्णतः सत्य नही कहा जा सकता। वस्तुतः इनकी प्राचीनता बौद्ध धर्म से भी कहीं अधिक है। वैदिक काल से ही इन प्रतीकों का उदय होने लगा था। इस प्रकार स्वास्तिक मात्र बौद्ध धर्म से ही सम्बन्धित नही है। यह प्रतीक भी भारतीय कला को अपनी अर्न्तआत्मा में संजोए हुए है। इस सन्दर्भ में 14वीं शती

के बोगा़जकुई अभिलेख का उल्लेख किया जा सकता है। इसमें त्रिरत्न आदि कुछ भारतीय प्रतीक विद्यमान है।

बौद्ध प्रतीकों के विभिन्न अंकन बौद्ध कलाकेन्द्रों नागार्जुनकोण्ड, अमरावती, बोधगया, मथुरा, सॉची एवं भरहुत आदि स्थानों पर दर्शाया गया है। इन प्रतीकों में त्रिरत्न (चित्र सं. 2) भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। धर्मचक्र एवं त्रिरत्न प्रतीकों के अनेकानेक पूजा–गृह सॉची के स्तूप फलक पर दृष्टिगत होते है। बौद्ध उत्कीर्ण कला के अर्न्तगत बोधिवृक्षों के प्रतीक, वेदिका से घिरे एवं स्तम्भ–मण्डपों में समाविष्ट तथा मालायुक्त छत्रों और पताकाओं से सजे हुए दृष्टिगत होते है। आगामी हिन्दू मन्दिरों के प्रारूप के अर्न्तगत ही सॉची–शिल्प में अंकित त्रिरत्न के एकाकी एवं तिहरे प्रतीकों के मन्दिर स्वीकारे जा सकते है। उनके संपूज्य स्वरूप के प्रमाण स्वरूप इन प्रतीकों के ऊपर लगे छत्र, उनसे लटकती मालाएँ, तथा विद्याधर (मालाधारी एवं उड़ते हुए) दृष्टिगत होते है। सॉची, बोधगया आदि स्थानों से अन्य प्रतीकों के अंकन भी प्राप्त होते है। बौद्ध कला में प्रतीकों का स्थान इस प्रकार महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त चक्रध्वज आदि प्रमुख प्रतीको का अंकन भी इस कला में प्राप्त होते है।[10]

द्रविड़ों एवं आर्य दोनों ही जातियों से बौद्ध–युग की कला ने अपनी परम्परा ग्रहण की। देवगणों के रूप में परिर्वतन बौद्ध–वाड्मय में दृष्टिगत होता है। दोनों ही जातियों के अराध्य देव बौद्ध कला के अर्न्तगत आये। मूलतः अनार्यो के उपासक यक्ष नाग, आदि थे। लेकिन बौद्ध धर्म के अर्न्तगत यह अब तथागत को पूजनीय मान कर उनकी उपासना करने लगे। सारनाथ स्तम्भ के फलक पर उत्कीर्ण पशु हस्ति, बैल, सिंह तथा अश्व है। यह पशु वास्तव में भारतीय ही है। यह चारों पशु चार दिशाओं के प्रतीक स्वरूप प्राचीन काल में स्वीकारे गये। इनके अंकन के बीच में धर्म–चक्र उत्कीर्ण किया गया है। इन पशुओं के भारतीय होने के कारण ही इन्हें अनेकानेक मन्दिरों पर अंकित देखा जा सकता है।[11]

त्रिरत्न यद्यपि बौद्ध विचारधारा के अनुसार महत्वपूर्ण है। और इसका सम्बन्ध बुद्ध, धर्म और संघ के संगठित स्वरूप स्वरूप से है। परन्तु ब्राहम्ण धर्म के अर्न्तगत भी इसको विशिष्ट स्थान प्राप्त है। साधारणतः बौद्ध विचारधारा के प्रर्वतक बुद्ध कहे गये। तथा उस विचारधारा के नियामक स्वरूप धर्म को स्थान दिया गया। और उस विचारधारा के अनुयायियों के समुह को संघ कहा गया। अत्यन्त प्राचीन काल से ही तीन संख्याओं का

महत्व ब्राहम्ण विचारधारा में भी विद्यमान है। त्रिदेव के रूप में ब्रम्हा, विष्णु, महेश का नाम हिन्दू धर्म में लिया जाता है। यह देव सृर्जन, पालन एवं संहार के प्रतीक स्वरूप स्वीकारे गये है। त्रिलोक तक सम्पूर्ण संसार स्वर्ग, मर्त्य (पृथ्वी) और पाताल में विस्तृत है। मोक्ष के मार्ग को धर्म, अर्थ और काम प्रशस्त करता हैं। जिसका समाहित रूप हम त्रिर्वग में देखते है। अतः त्रिरत्न ब्रहाम्ण धर्म में भी उल्लेखनीय स्थान रखता है।

त्रिरत्न का अनेकानेक उपयोग भारतीय कलाकारों द्वारा किया गया है। उत्कीर्णन शिल्प में त्रिरत्न प्रतीक का प्रयोग बोधगया, सॉची, भरहुत, नागार्जुनकोण्ड, अमरावती आदि स्थानों पर दृष्टिगत होते है। त्रिरत्न के चार प्रतीकों द्वारा वैदिक स्तम्भों के चक्र–फलक तथा अन्य फलकों को हम अंलकृत देखते है। जो कि बौद्ध कला की दृष्टि से उल्लेखनीय स्थान रखते है। शुंग काल में त्रिरत्न जैसे मांगलिक चिन्ह का प्रयोग बौद्ध कला के अर्न्तगत लोकप्रीयता की दृष्टि से उल्लेखनीय प्रतीत होती है। इस चिन्ह के प्रतीक को हम सॉची के स्तूप के समस्त तोरण पर एवं भरहुत स्तूप के मुख्य तोरण पर देख सकते है।[12]

स्तूप बौद्ध कला एवं धर्म से ही सामान्यतः सम्बन्धित समझा जाता है। बौद्ध कला के अर्न्तगत प्रमुख स्तूपों के रूप में सॉची, भरहुत, अमरावती एवं नागर्जुनीकोण्ड का उल्लेख किया जा सकता है। जिनमें से प्रथम दो मध्य प्रदेश तथा अगले दो आन्ध्रप्रद्रेश में स्थित है। परन्तु बौद्ध कला के विशिष्ट उदाहरण स्तूप का उल्लेख वैदिक काल से ही प्राप्त होने लगता है। किन्तु इसका मूर्त रूप बौद्ध धर्म और कला के अर्न्तगत ही प्रचलन में आया। स्तूप शब्द का प्रयोग छायादार वृक्ष एवं अग्नि के ज्वाला के लिए ऋग्वेद में प्राप्त होता है। शतपथ ब्राहम्ण में स्तूप शब्द द्वारा असुर श्मशानों का उल्लेख किया गया है। महाभारत में इस सन्र्दभ में चैत्य–यूप का उल्लेख प्राप्त होता है। इस प्रकार बौद्ध कला में स्तूप भी भारतीय कला के अर्न्तगत बौद्ध कला की तारतम्यता को प्रदर्शित करते है।[13]

भारतीय जीवन एवं कला के महत्वपूर्ण अंग के रूप से श्रीवत्स (चित्र सं. 3) प्रतीक भी उल्लेखनीय स्थान रखता है। श्रीवत्स प्रतीक के विभिन्न अंकनों के दृश्यांकन से यह प्रतीत होता है। कि मानव–मूर्ति के रूप में इस प्रतीक का उद्भव हुआ। मनुष्य ही अपने विशिष्ट गुणों के कारण लक्ष्मी का पुत्र होने योग्य था। इस प्रकार एक मांगलिक चिन्ह था। और लक्ष्मी के प्रतीक स्वरूप इसका अंकन किया जाता था। सॉची के स्तूप सं. दो की एक वेदिका–स्तम्भ पर श्रीवत्स प्रतीक का अंकन लता के शीर्ष पर किया गया है। गंगा–घाटी

से प्राप्त एन्थ्रॉपोमार्फिक ताम्र–उपकरणों तथा सिन्धु सभ्यता की मृण्मूर्तियों मे श्रीवत्स के मानवाकृति रूप का अंकन प्राप्त है। शुंग काल में इसके स्वरूप में परिर्वतन हुआ। और अब पलथी मारकर बैठे हुए मानवाकृति के रूप में इसका अंकन किया जाने लगा। सारनाथ, भाजा, मथुरा, भरहुत एवं सॉची में भी श्रीवत्स के विभिन्न अकंन हमें प्राप्त होते है। अतः यह प्रतीक भारतीय एवं बौद्ध दोनो ही कलाओ ंकी दृष्टि से महत्वपूर्ण प्रतीत होता है।।[14]

उपरोक्त विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता है, कि श्रीवस्त, त्रिरत्न, स्वास्तिक एवं बोधवृक्ष आदि कला प्रतीक बौद्ध कला के अर्न्तगत विशिष्ट स्थान प्राप्त किए। परन्तु इनके अन्तः पटल पर भारतीय कला की आत्मा विराजमान रही। इसी कारण भारतीय कला के विशिष्ट प्रभाव में आने के कारण ही बौद्ध कला के उदाहरण प्रतीकों ने मूर्त रूप धारण कर लिया। अतः भारतीय कला में बौद्ध कला का तारतम्य स्पष्टतः दृष्टिगत होता है।

चित्र फलक सं.1
स्वास्तिक

चित्र फलक सं. 2 .
त्रिरत्न

चित्र फलक सं. 3
श्रीवत्स

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. उपाध्याय, वासुदेव शरण (2012), भारतीय कला, पृथ्वी प्रकाशन, वाराणसी पृ. 6।
2. श्रीवास्तव, के.सी (2000), प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, इलाहाबाद पृ. 823, 824।
3. उपाध्याय, वासुदेव शरण (2012), भारतीय कला, पृथ्वी प्रकाशन, वाराणसी पृ. 3।
4. द्विवेदी, अंशुमान (2007), हड़प्पा सभ्यता एवं संस्कृति, इलाहाबाद पृ. 19।
5. शास्त्री, नीलकण्ठ, सिन्धु–सभ्यता का आदि केन्द्र–हड़प्पा, चित्र 20,21,23 आई.एन.गंजर, एन्शियण्ट इण्डियन आर्ट ऐण्ड द वेस्ट, चित्र 96–100।
6. श्रीवास्तव, ए.एल., भारतीय कला–प्रतीक, इलाहाबाद पृ.25।
7. वही पृ. 27।
8. वही पृ. 18।
9. श्रीवास्तव, बृजभूषण (2001), प्राचीन भारतीय प्रतिमा विज्ञान एवं मूर्तिकला, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, पृ 185।
10. श्रीवास्तव, ए.एल., भारतीय कला–प्रतीक, इलाहाबाद पृ. 18,19।
11. गुप्त, जगदीश चन्द्र, कला के प्राण बुद्ध, म.प्र. शासन साहित्य, नागपुर पृ. 23,29,48।
12. श्रीवास्तव, ए.एल., भारतीय कला–प्रतीक, इलाहाबाद पृ. 48,49।
13. सहाय, शिवस्वरूप (2003), भारतीय कला, इलाहाबाद पृ.137।
14. श्रीवास्तव, ए.एल., भारतीय कला–प्रतीक, इलाहाबाद पृ. 38,39।

————